Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

इतिहास (वैकल्पिक विषय)

आधुनिक भारत (भाग-2)

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: CSHS06

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

इतिहास (वैकल्पिक विषय)

आधुनिक भारत (भाग–2)

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष: 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web: www.drishtiias.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिए निम्नलिखित पेज को 'like' करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

UPSC DLP

विषय सूची (Contents)

10.	सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन	5–26
11.	ब्रिटिश शासन के प्रति भारतीय प्रतिक्रिया	27–37
12.	1857 ई. का विद्रोह	38–45
13.	भारतीय राष्ट्रवाद	46–52
14.	राष्ट्रीय आंदोलन का विकास	53–58
15.	उग्रवादी चरण एवं स्वदेशी आंदोलन	59–68
16.	क्रांतिकारी राष्ट्रवादी आंदोलन	69–77
17.	गांधी	78–96
18.	भारत छोड़ो आंदोलन	97–108
19.	युद्धोपरांत संधि वार्ताएँ एवं कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम	109–124

अध्याय
10

सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन (Socio-Religious Reform Movement)

10.1 सामाजिक–धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के कारण	10.4 प्रसिद्ध समाज सुधारक एवं समाज सुधार आंदोलन
10.2 सुधार आंदोलनों की सीमाएँ	10.5 सामाजिक सुधार के केंद्र में महिलाएँ
10.3 सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के प्रभाव	10.6 जाति और समाज सुधार आंदोलन

19वीं सदी में ज़बरदस्त बौद्धिक व सांस्कृतिक उथल-पुथल भारत की एक विशेषता थी। इस काल में हुए धार्मिक और सामाजिक सुधार आंदोलन का भारत के इतिहास में विशेष स्थान है। इसके बहुमुखी स्वरूप एवं व्यापकता की दृष्टि से इसे एक महत्त्वपूर्ण घटना माना जा सकता है। इस आंदोलन ने देश के जनजीवन को झकझोर दिया। इसने जहाँ एक ओर धार्मिक एवं सामाजिक सुधारों का आह्वान किया वहीं दूसरी ओर इसने भारत के अतीत को उजागर कर भारतवासियों के मन में आत्मसम्मान एवं आत्मगौरव की भावना जगाने की कोशिश की।

इन आंदोलनों का प्रभाव यह हुआ कि बीसवीं सदी के आते-आते देशवासी धार्मिक एवं सामाजिक सुधारों के साथ ही अपने राजनीतिक अधिकारों हेतु जागृत हुए। बीसवीं सदी में हुए राजनीतिक आंदोलनों ने धीरे-धीरे सामाजिक और धार्मिक आंदोलनों को अपने में समाहित कर लिया और बीसवीं सदी तक आते-आते सामाजिक और धार्मिक आंदोलन अपनी चमक खोने लगे, अब वे राजनीतिक आंदोलनों में समाहित होकर उसके एक भाग के रूप में सामने आने लगे।

10.1 सामाजिक–धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के कारण *(Causes of Rise of Socio–Religious Reform Movement)*

- **पराजय की चेतना:** आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव व विदेशी शक्ति द्वारा पराजित होने की चेतना ने उन्नीसवीं सदी में एक नई जागृति को जन्म दिया।
- **विचारशील लोगों का योगदान:** विचारशील लोगों में जिन्हें आधुनिक शिक्षा और पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान तथा दर्शन का ज्ञान प्राप्त था, यह आम धारणा पनपी कि औपनिवेशीकरण का मूल कारण भारतीय सामाजिक ढाँचा एवं संस्कृति में विद्यमान कमजोरियाँ हैं। इन बुराइयों को दूर करने के भी उपाय खोजे जाने लगे।
- **वैज्ञानिक दृष्टिकोण:** जीवन के प्रति पाश्चात्य मानवतावाद और विवेकपूर्ण वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समाज में समता के सिद्धांत का उत्थान हुआ।
- **ईसाई मिशनरियाँ:** ईसाइयों के आगमन से अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रसार हुआ जिससे पाश्चात्य ज्ञान एवं विचार भारतीयों तक पहुँचने लगे और उनमें जागरण की चिंतनधारा फूटने लगी। जब ईसाई मिशनरियों ने भारतीयों को ईसाई बनाना शुरू किया तो भारतीय अपने धर्म की रक्षा करने के प्रयत्न में जुट गए। वस्तुत: कुछ भारतीय इस बात को जानते थे कि ये ईसाई हिन्दुओं की कुछ कमजोरियों का फायदा उठा रहे हैं जिनमें जात-पात, अंधविश्वास और निरर्थक आडंबर प्रमुख थे। अत: हिन्दू धर्म की रक्षा के लिये उसमें सुधार आवश्यक प्रतीत होने लगा।
- **यूरोपीय विद्वान:** पुनर्जागरण लाने में उन कतिपय यूरोपीय विद्वानों का भी हाथ था जो भारत की प्राचीन सांस्कृतिक उपलब्धियों से प्रभावित थे। विलियम जोंस, मैक्समूलर जैसे विदेशी विद्वानों ने भारतीय संस्कृति एवं ग्रंथों का अध्ययन कर उन्हें श्रेष्ठ बताया। फलत: भारतीयों में आत्मगौरव एवं आत्मसम्मान की भावना उत्पन्न हुई तथा उन्होंने उसकी श्रेष्ठता को स्थापित करने का प्रयत्न किया।
- **प्रेस का योगदान:** प्रेस की स्थापना हो जाने से अनेक पत्र-पत्रिकाओं एवं साहित्य का प्रकाशन हुआ। इसने भारतीयों को उनके प्रति अंग्रेज़ों की संवेदनहीनता, शोषण और क्रूरता का ज्ञान कराया। फलत: उनमें आत्मसम्मान की भावना जागृत हुई। उन्होंने अपने समाज व धर्म की रक्षा हेतु प्रयत्न आरंभ किये।

रंग देने का प्रयास नहीं किया। अपने सुधार कार्यक्रमों में उन्होंने 'वर्णाश्रम व्यवस्था' पर प्रहार को शामिल नहीं किया। उन्होंने राष्ट्रवाद के संदेश को हरिजनों तक पहुँचाने एवं उन्हें सामाजिक एवं राष्ट्रीय कार्यक्रमों में सक्रिय भूमिका निभाने के लिये भी प्रेरित किया। वाद-विवाद व तार्किक विश्लेषण कुछ भी निष्कर्ष निकालें, इतना तो निष्पक्ष रूप से सर्वमान्य है कि गांधीजी के हरिजन अभियान का उद्देश्य हिंदू समाज का शुद्धीकरण था।

19वीं और बीसवीं सदी के आंदोलनों का तुलनात्मक अध्ययन

19वीं सदी के आंदोलनों की मुख्य प्रकृति भारतीय समाज और धर्म में उपस्थित कुरीतियों में सुधार की रही। इन आंदोलनों के द्वारा राजा राममोहन राय, देबेन्द्र नाथ टैगोर, ईश्वर चंद्र विद्यासागर आदि ने मूर्ति पूजा, तीर्थ यात्रा कर्म कांड, अंधविश्वास, आडंबर, सती प्रथा, जाति प्रथा, बहु-विवाह आदि सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों के उन्मूलन एवं स्त्री शिक्षा और उसके आर्थिक अधिकार, विधवा विवाह, कर्म और पुनर्जन्म पर आधारित मान्यताओं को स्वेच्छा से अपनाने के अधिकारों को लागू कराने का प्रयास किया। इनमें कुछ संस्थाओं जैसे आत्मीय सभा, रामकृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसायटी आदि की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही है। इस सदी में कुछ आंदोलन पूर्णतया धार्मिक आधार पर भी हुए जिनमें अलीगढ़ आंदोलन, फराजी आंदोलन, वहाबी एवं देवबंद आंदोलन तथा आर्यसमाज, वेद समाज, रामकृष्ण मिशन एवं प्रार्थना समाज द्वारा किये गए कार्य प्रमुख हैं।

1885 में कॉन्ग्रेस के निर्माण के उपरांत सामाजिक और धार्मिक आंदोलनों की प्रवृत्ति क्षीण हो गई और ये राजनीतिक आंदोलनों के एक भाग के रूप में परिवर्तित हो गए। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ और बंगाल विभाजन के बाद से ही आंदोलनों की प्रकृति मुख्यत: राजनीतिक हो गई। गांधीजी के आगमन के उपरांत राजनीतिक आंदोलनों में भी महत्त्वपूर्ण बदलाव हुए। राजनीतिक अधिकारों के साथ-साथ जाति प्रथा उन्मूलन, मूल अधिकार, आर्थिक स्वतंत्रता और अछूतों के अधिकारों हेतु भी प्रयास किये गए। इनमें मावलंकर के महार आंदोलन, नारायण गुरु का एझावा आंदोलन और वी. रामास्वामी का आत्मसम्मान आंदोलन ने जाति प्रथा, छुआछूत और ब्राह्मणों के वर्चस्व पर कड़ा प्रहार किया। नेहरू, गांधी और अंबेडकर आदि ने राजनीतिक सुधारों के साथ सामाजिक सुधार, समता, स्वतंत्रता, न्याय के मुद्दों को भी समाहित किया।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. "राजा (राममोहन राय) की मेहनतों का प्रमुख महत्त्व भारत में मध्यकालीनता के बलों के विरुद्ध उनके संघर्ष में निहित प्रतीत होता है।" **UPSC (Mains) 2017**
2. "आर्य समाज को भारत में पश्चिम से आयातित स्थितियों के परिणाम के रूप में, पूर्णतया तार्किकत: घोषित किया जा सकता है।" इस कथन का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिये। **UPSC (Mains) 2017**
3. "श्री नारायण गुरु का सामाजिक सुधार आंदोलन में, उपाश्रित (सबल्टर्न) परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से, एक प्रधान मध्यक्षेप था।" इस कथन का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिये। **UPSC (Mains) 2017**
4. "स्वामी दयानंद का दर्शन अतिवाद (Extremism) एवं सामाजिक आमूल परिवर्तनवाद, (Social Radicalism) दोनों तत्त्वों का प्रतिनिधित्व करता है।" प्रमाणित कीजिये। **UPSC (Mains) 2015**
5. "हालाँकि, श्री रामकृष्ण नव हिन्दुवाद के एक पैगंबर बन गए थे, परंतु उन्होंने किसी नए धर्म की स्थापना का दावा कभी नहीं किया।" सविस्तार स्पष्ट कीजिये। **UPSC (Mains) 2014**
6. चर्चा कीजिये कि भारत के पुनर्जागरण आंदोलन ने किस सीमा तक राष्ट्रीय चेतना के उदय में योगदान दिया था?
7. उन्नीसवीं शताब्दी का भारतीय पुनर्जागरण एक साथ पश्चिमी मूल्यों की स्वीकृति और अस्वीकृति था। क्या आप सहमत हैं?
8. आधुनिक भारत के निर्माण में दयानंद सरस्वती अथवा सर सैयद अहमद खाँ के योगदानों का मूल्यांकन कीजिये।
9. उन्नीसवीं शताब्दी के धार्मिक सुधार आंदोलनों ने यह प्रयास किया कि "प्राचीन धर्म (हिन्दू धर्म) को ऐसा नया रूप दिया जाए जो नए समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।" टिप्पणी कीजिये।

अध्याय
11

ब्रिटिश शासन के प्रति भारतीय प्रतिक्रिया (Indian Reaction Against British Rule)

11.1 ब्रिटिश भारत में किसान विद्रोह	11.3 ब्रिटिश भारत में जनजातीय विद्रोह
11.2 19वीं-20वीं सदी के कृषक आंदोलनों का स्वरूप	11.4 जन विद्रोह

अंग्रेज़ों ने जिस प्रक्रिया से भारत को उपनिवेश में बदलकर उसका शोषण किया, उसी प्रक्रिया ने उन कारणों को भी जन्म दिया जो सत्ता के खिलाफ शुरू हुए विभिन्न जनविद्रोहों के पीछे निहित थे। वस्तुत: "कंपनी सरकार" की राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक नीतियों के परिणामों से पीड़ित समाज के विभिन्न वर्गों, विस्थापित शासकों, ज़मींदारों, धार्मिक नेताओं, फकीरों, किसानों, आदिवासियों एवं सैनिकों ने अनेक बार प्रतिरोध एवं विद्रोह किया। इन विद्रोहों को जन विद्रोह के नाम से जाना जाता है। इन्हें मोटे तौर पर चार भागों में बाँटा जा सकता है-

1. नागरिक विद्रोह
2. किसान विद्रोह
3. आदिवासी व जनजातीय आंदोलन
4. सैनिक विद्रोह

इन विद्रोहों का स्वरूप एवं नेतृत्व अलग-अलग था। इन सभी विद्रोहों का मूल कारण प्रभावित वर्ग में व्याप्त असंतोष था।

ब्रिटिश विस्तारवादी औपनिवेशिक नीति ने परंपरागत शासन प्रणाली में परिवर्तन ला दिया। फलत: विस्थापित शासकों, ज़मींदारों एवं बड़े भूमिपतियों के नेतृत्व में अनेक विद्रोह हुए। अपने हितों की सुरक्षा के लिये अनेक शासकों एवं बड़े ताल्लुकेदारों ने भी विद्रोह का सहारा लिया।

नागरिक विद्रोहों में प्रमुख थे- संन्यासी विद्रोह, किट्टूर, वेलुथंपी, अहोम, खासी, विजयनगरम के राजा का विद्रोह आदि।

ये सभी विद्रोह किसानों, ज़मींदारों, छोटे सरदारों के आपसी सहयोग से हुए। इनका स्वरूप स्थानीय था। ये स्थानीय मुद्दों से प्रेरित होते थे। विद्रोह में नवीन सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था के विकल्प का अभाव था। स्थानीय होने के बावजूद इन विद्रोहों की तीव्रता का एहसास इस बात से लगाया जा सकता है कि सरकार इन्हें सेना के बल पर ही दबा सकी।

11.1 ब्रिटिश भारत में किसान विद्रोह *(Peasant Rebellion in British India)*

नागरिक विद्रोहों की अपेक्षा किसानों का विद्रोह व्यापक स्वरूप लिये हुए था। सरकार की आर्थिक नीतियों एवं नई भू-राजस्व व्यवस्था का दुष्परिणाम सबसे अधिक किसानों को ही भुगतना पड़ा। किसानों को एक साथ कंपनी व ज़मींदार दोनों के अत्याचारों का सामना करना पड़ता था। फलत: गरीबी और शोषण से पीड़ित किसानों ने अनेक बार विद्रोह किये। इन किसान आंदोलनों को दो चरणों में बाँटकर देखे जाने की ज़रूरत है-

(i) उन्नीसवीं सदी के विद्रोह/आंदोलन
(ii) बीसवीं सदी के विद्रोह/आंदोलन।

कारण *(Reasons)*

ब्रिटिश आर्थिक नीति

- ब्रिटिश भू-राजस्व प्रणाली में लगान की दरें अत्यधिक होने से किसान त्रस्त थे। ज़मींदारी प्रथा में बिचौलिये वर्ग की संस्थागत श्रेणी का विकास हुआ जो ज़मींदारों के लिये लगान वसूलते थे। ज़मींदार एवं उत्पादनकर्त्ता के बीच 50 की संख्या तक बिचौलिये हुआ करते थे। रैयतवाड़ी व्यवस्था के तहत निर्धारित अत्यधिक उच्च लगान राशि को जुटाने के लिये किसान साहूकार से कर्ज़ लेने को विवश हुए परिणामस्वरूप धीरे-धीरे किसान महाजनों के चंगुल में फँसने लगे और उनकी ज़मीनें, फसलें व पशु उनके हाथों से निकलकर ज़मींदारों, व्यापारियों, महाजनों आदि के हाथों में सिमटने लगे। किसान बेगार करने को मजबूर हो गए। इस तरह ब्रिटिश भू-राजस्व व्यवस्था ने किसानों को बेचैन कर दिया और वे आंदोलन के लिये तत्पर हो गए।
- हस्तशिल्प व्यवसाय के नष्ट होने से इन उद्योगों से जुड़े लोग भी खेतों में आ धमके जिससे कृषि भूमि पर दबाव बढ़ा।

अध्याय
12

1857 ई. का विद्रोह
(Revolt of 1857 A.D.)

12.1 विद्रोह के कारण	12.3 1857 ई. के विद्रोह का स्वरूप
12.2 विद्रोह का आरंभ एवं प्रसार	12.4 1857 ई. के विद्रोह का परिणाम एवं प्रभाव

भारत में अंग्रेज़ों के साम्राज्य विस्तार एवं आर्थिक शोषण की घृणित नीतियों के परिणामस्वरूप समाज के विभिन्न वर्गों में ब्रिटिश शासन के प्रति जन असंतोष उभर रहा था। भारतीयों का रोष विभिन्न स्थानों पर सैनिक विद्रोहों अथवा जन विद्रोहों के रूप में समय-समय पर दृष्टिगोचर होता रहा। अंततः यह असंतोष एक प्रचंड जन विद्रोह के रूप में सन् 1857 ई. में प्रकट हुआ जो वस्तुतः ब्रिटिश नीतियों के विरुद्ध जनता की संचित शिकायतों एवं असंतोष की उपज था। इस विद्रोह ने ब्रिटिश शासन की जड़ों को हिला दिया। यद्यपि इसका आरंभ सिपाही असंतोष से हुआ किंतु शीघ्र ही एक व्यापक क्षेत्र के लोग इसमें शामिल हो गए।

12.1 विद्रोह के कारण *(Causes of Revolt)*

आर्थिक कारण *(Economic Cause)*

- अंग्रेज़ों द्वारा ब्रिटिश व्यापारियों एवं उद्योगपतियों के पक्ष में अपनाई जाने वाली आर्थिक व भू-राजस्व नीतियों ने देश के पारंपरिक आर्थिक ढाँचे का पूर्णतया विनाश कर दिया। इन नीतियों ने कृषकों, दस्तकारों, हस्तशिल्पियों तथा बड़ी संख्या में परंपरागत ज़मींदारों, मुखियाओं को निर्धन बना दिया।
- निचले स्तर पर फैले प्रशासनिक भ्रष्टाचार ने आम आदमी को बुरी तरह प्रभावित किया। साथ ही जटिल न्याय प्रणाली के कारण गरीब लोग धनिकों के शोषण का शिकार बनते गए।
- लार्ड विलियम बैंटिंक (1828–35) द्वारा कर मुक्त काश्तकारी अधिकार छीने जाने से अनेक भू-स्वामी निराश हो गए।
- भारतीय समाज के मध्यम एवं उच्च वर्गों को विशेषकर उत्तर भारत में उच्च वेतन वाले प्रशासनिक पदों से वंचित रखा गया, जिसका उन पर बुरा प्रभाव पड़ा।
- देशी रजवाड़ों के नष्ट होने से अनेक कलाकार, विद्वान एवं धार्मिक उपदेशक राजकीय संरक्षण से वंचित हो गए जिससे इनकी आर्थिक स्थिति खराब हो गई।

राजनीतिक कारण *(Political Cause)*

- अंग्रेज़ भारत में सदैव विदेशी बने रहे। उनके और भारतीय लोगों के बीच कोई सामाजिक संबंध या संपर्क नहीं रहा। पहले के विदेशी शासकों की तरह अंग्रेज़ों ने उच्च वर्गों के भारतीयों से भी सामाजिक मेल-जोल नहीं बढ़ाया। उल्टे वे प्रजाति श्रेष्ठता के नशे में चूर रहे।
- अंग्रेज़ों द्वारा देशी राज्यों पर प्रभावकारी नियंत्रण के लिये अपनाए जाने वाले अनुचित तरीकों को भारतीय समाज के सभी वर्गों ने नापसंद किया।
- नाना साहब की पेंशन समाप्त करने एवं बहादुरशाह जफर द्वितीय के उत्तराधिकारी को राजकीय उपाधि तथा ऐतिहासिक लाल किले से वंचित कर दिल्ली के एक मामूली मकान में रखने के प्रस्ताव ने जनता को आक्रोशित किया।
- डलहौजी द्वारा 1852 ई. में बैठाए गए इनाम कमीशन की जाँच के फलस्वरूप कई राज्यों एवं जागीरों (लगभग 21,000) को ज़ब्त कर लिया गया। डलहौजी द्वारा अवध को हथियाने से देशी राज्यों में तीखी प्रतिक्रिया हुई जिससे अंग्रेज़ों की राजनीतिक प्रतिष्ठा को काफी धक्का लगा। इस कार्य से कंपनी की सेवा में विद्रोह का वातावरण बन गया क्योंकि अधिकांश सिपाही (लगभग 75,000) अवध के थे। अवध के अधिग्रहण से सिपाहियों की आय पर भी बुरा असर

अध्याय
13

भारतीय राष्ट्रवाद
(Indian Nationalism)

13.1 भारतीय राष्ट्रवाद का उद्भव
13.2 भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस की स्थापना
13.3 कॉन्ग्रेस के प्रति विभिन्न वर्गों की प्रतिक्रिया

13.1 भारतीय राष्ट्रवाद का उद्भव *(Emergence of Indian Nationalism)*

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में राष्ट्रीय चेतना बहुत तेज़ी से विकसित हुई और भारत में एक संगठित राष्ट्रीय आंदोलन का आरंभ हुआ। इस राष्ट्रीय भावना के उदय ने भारत को अंग्रेज़ों के चंगुल से मुक्त कराया। राष्ट्रवाद के उद्भव के संदर्भ में **निम्नलिखित कारणों** का उल्लेख किया जा सकता है-

राष्ट्रवाद के उद्भव के कारण

1. विदेशी आधिपत्य का परिणाम (Consequence of Foreign Dominance)

- ब्रिटिश शासन और उसके प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष परिणामों ने भारत में राष्ट्रीय आंदोलन के विकास की भौतिक, नैतिक और बौद्धिक स्थितियाँ उत्पन्न कीं।
- इस आंदोलन की जड़ें भारतीय जनता के हितों तथा भारत में ब्रिटिश हितों के टकराव में थीं। ब्रिटिश औपनिवेशिक हित ने भारत के विकास के मार्ग को अवरुद्ध कर दिया। भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग ने यह महसूस किया कि ब्रिटिश शासन उसके हितों के खिलाफ है।
- किसान अपने उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा भू-राजस्व के रूप में देने से असंतुष्ट थे। जब भी किसान अपने शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाते थे, तब पुलिस और फौज कानून-व्यवस्था के नाम पर उनका दमन कर देती थी।
- दस्तकार और शिल्पियों ने देखा कि विदेशी राज़ ने विदेशी प्रतिद्वंद्विता को बढ़ावा देकर उनको तबाह कर दिया और उनके पुनर्वास के लिये कुछ भी नहीं किया।
- आगे 20वीं सदी में खदान तथा बागानों के मज़दूरों ने देखा कि ऊपरी सहानुभूति के बावजूद सरकार पूंजीपतियों विशेषकर विदेशी पूंजीपतियों का पक्ष लेती है। जब भी वे सामूहिक विरोध (हड़ताल, प्रदर्शन) करते हैं, तब सरकार उन्हें कुचल देती है। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी महसूस किया कि बढ़ती बेरोज़गारी का समाधान केवल तीव्र औद्योगीकरण से संभव है और यह कार्य केवल एक स्वतंत्र सरकार ही कर सकती है।
- उदीयमान बुद्धिजीवी वर्ग ने 1857 ई. तक विदेशी शासन का समर्थन इस आशा से किया था कि विदेशी होने के बावजूद वह भारत का आधुनिकीकरण तथा औद्योगीकरण करेगा, लेकिन वे निराश हो गए जब उन्होंने देखा कि इंग्लैंड की पूंजी, ब्रिटिश पूंजीपतियों के निर्देशन में, भारत में लागू ब्रिटिश नीतियाँ देश को आर्थिक रूप से पिछड़ा बना रही हैं। राजनीतिक दृष्टि से अंग्रेज़ों ने खुलेआम घोषणा की कि वे भारत में बने रहेंगे और भारतीयों को स्वशासन का पाठ पढ़ाएंगे। किंतु उन्होंने नागरिक अधिकारों को अधिकाधिक प्रतिबंधित किया तथा स्वशासन की दृष्टि से भारतीयों को अयोग्य घोषित कर दिया। संस्कृति के क्षेत्र में भी अंग्रेज़ी शासन उच्च शिक्षा एवं आधुनिक विचारों के प्रसार के प्रति नकारात्मक और विरोधी भाव अपना रहा था।
- उभरते हुए भारतीय पूंजीपति वर्ग ने भी जल्द ही यह समझ लिया कि वह साम्राज्यवाद के कारण नुकसान उठा रहा था। सरकार की व्यापक चुंगी कर तथा यातायात संबंधी नीतियों के कारण इसके विकास में भारी बाधाएँ आ रही थीं। अपने शैशव अवस्था में इन्हें सरकार की सक्रिय सहायता की ज़रूरत थी, लेकिन कोई सहायता नहीं मिली और उन्हें विदेशी पूंजीपतियों की असमान प्रतियोगिता में खड़ा होना पड़ा।

अध्याय
14

राष्ट्रीय आंदोलन का विकास
(Development of National Movement)

14.1 राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान विकसित विचारधाराएँ
14.2 प्रारंभिक राष्ट्रवादी : उदारवादी चरण (1885–1905)
14.3 साम्राज्यवाद की अर्थशास्त्रीय आलोचना: आर्थिक राष्ट्रवाद

14.1 राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान विकसित विचारधाराएँ *(Ideologies Developed During National Movement)*

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन अपने विकास के क्रम में भिन्न-भिन्न विचारधाराओं को लेकर चला। इन विचारधाराओं ने अपने-अपने तरीके से राष्ट्रीय आंदोलन को प्रभावित किया।

उदारवादी राजनीति/नरमपंथ *Liberal Politics/Moderates*

- उदारवादी राजनीति के तहत नरमपंथी संवैधानिक सुधारों के माध्यम से परिवर्तन लाने के पक्ष में थे। वे अंग्रेज़ों की न्यायप्रियता एवं धर्मपरायणता में भरोसा रखते थे। फलतः उन्होंने आंदोलन के संवैधानिक तरीकों को अपनाया।
- वे शांतिपूर्ण और रक्तहीन संघर्ष में विश्वास रखते थे।
- उन्हें ब्रिटिश संसद और जनता पर पूरा भरोसा था। उनकी शिकायत केवल भारत में वायसराय और उसकी कार्यकारी काउंसिल तथा नौकरशाही द्वारा कायम किये गए **'अ-ब्रिटिश राज्य'** (Un–British Rule) के खिलाफ थी, जिसे बातचीत के द्वारा समझा-बुझाकर दूर किया या सुधारा जा सकता था।
- उन्होंने सभाओं, व्याख्यानों, प्रार्थना-पत्रों के माध्यम से अपनी मांगें रखीं।
- इस उदारवादी राजनीति में मुख्य मांगें विधायी परिषदों का विस्तार करने, लोक सेवाओं में अधिक-से-अधिक भारतीयों को अवसर प्रदान करने, सैन्य व्यय में कमी करने आदि रहीं। इनके कार्यक्रमों में किसान एवं मज़दूरों की समस्याओं के समाधान के लिये प्रायः कुछ नहीं था।
- उदारवादियों ने कॉन्ग्रेस को केवल एक राजनीतिक मंच माना और इसमें समाज सुधार के मुद्दे को शामिल नहीं किया।
- उदारवादियों को आम जनता की योग्यता पर संदेह रहा। वे उन्हें आंदोलन के योग्य नहीं समझते थे। फलतः उनका आंदोलन शिक्षित वर्ग तक सीमित रहा। इस तरह उदारवादी राजनीति बुर्जुवाई (परंपरावादी/पूंजीपति/उच्च शिक्षित वर्ग) दृष्टिकोण से युक्त रही।

उग्रवादी राजनीति/गरमपंथ *(Extremist Politics)*

- उग्रवादियों को जनता की शक्ति पर विश्वास था। अतः उन्होंने जनता को संगठित कर आंदोलन में भागीदारी पर बल दिया।
- उग्रवादी अंग्रेज़ों का विरोध करते थे और उन्होंने संवैधानिक सुधारों के माध्यम से अधिकार प्राप्त करने की उदारवादी राजनीति की आलोचना की।
- राजनीतिक संघर्ष में उन्होंने स्वदेशी अपनाने एवं विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार पर बल दिया।
- उग्रवादियों का कहना था कि सामाजिक समानता व राजनीतिक स्वतंत्रता उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। वे राजनीतिक दासता से मुक्ति पाने के लिये आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी होना अत्यंत आवश्यक समझते थे।
- उग्रवादियों ने हिन्दी गौरव के पुनरुत्थान पर विशेष बल दिया।

अध्याय
15

उग्रवादी चरण एवं स्वदेशी आंदोलन
(Extremist Phase and Swadeshi Movement)

15.1 उग्रवादी राष्ट्रीयता
15.2 बंगाल का विभाजन एवं स्वदेशी आंदोलन
15.3 स्वदेशी आंदोलन में निहित प्रवृत्तियाँ
15.4 सूरत विभाजन

15.1 उग्रवादी राष्ट्रीयता *(Extremist Nationalism)*

19वीं सदी के अंत तक जब नरमपंथी राजनीति की असफलता एकदम स्पष्ट हो गई तब कॉन्ग्रेस के भीतर से ही एक प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई और जिसके फलस्वरूप एक ऐसी विचारधारा उत्पन्न हुई, जिसे **गरमपंथी** विचारधारा कहा गया।

- वस्तुत: भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस की स्थापना के 20 वर्ष हो चुके थे, लेकिन उसके फायदे समाज के सम्मुख दृष्टिगोचर नहीं हो रहे थे। कॉन्ग्रेस के कार्यक्रम और तरीके वर्ष में एक बार अधिवेशन करने और ब्रिटिश सरकार को अपने प्रस्तावों, सुझावों, प्रार्थना-पत्रों और स्मरण-पत्रों को भेजने तक सीमित थे। कभी-कभी कोई शिष्टमंडल भी इंग्लैंड भेज दिया जाता था, जो प्राय: चक्कर लगाकर बैरंग वापस लौट आता था। इससे एक ओर उदारवादी नेताओं की लोकप्रियता कम हो रही थी तो दूसरी ओर जन असंतोष बढ़ता जा रहा था।
- भारतीय जनमानस में बढ़ते असंतोष, सरकार की अकर्मण्यता और कॉन्ग्रेस की उदासीनता की अभिव्यक्ति उग्र राष्ट्रीय चेतना के रूप में हुई और उसके उन्नायक लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय और विपिनचंद्र पाल थे।

उग्रवादी राष्ट्रीयता के उदय के कारण *(Reasons for the Rise of Extremist Nationalism)*

1. ब्रिटिश शासन के सही स्वरूप की पहचान:

नरमपंथी राष्ट्रवादियों की राजनीति इस विश्वास पर आधारित थी कि ब्रिटिश शासन को अंदर से सुधारा जा सकता है। लेकिन राजनीतिक व आर्थिक प्रश्नों से संबंधित ज्ञान जब फैला तो धीरे-धीरे यह विश्वास टूट गया। राष्ट्रवादी लेखकों और आंदोलनकारियों ने जनता की निर्धनता का दोषी ब्रिटिश शासन को ठहराया।

2. राजनीतिक निराशा:

- 1892-1905 के बीच घटी राजनीतिक घटनाओं ने भी राष्ट्रवादियों को निराश करके उन्हें और भी उग्र राजनीति के बारे में सोचने को बाध्य किया। 1892 के भारतीय परिषद अधिनियम (Indian Council Act) ने लोगों को निराश ही किया।
- 1897 में तिलक पर राजद्रोह का अभियोग लगाकर 18 महीने का कारावास दे दिया गया।
- 1898 में एक कानून बनाया गया, जिसमें ब्रिटिश शासन के प्रति असंतोष की भावना फैलाने को अपराध घोषित किया गया।
- नरमपंथी नेतृत्व में कॉन्ग्रेस की उपलब्धियों के प्रति असंतोष।

3. कर्ज़न की प्रतिक्रियावादी नीति:

- कर्ज़न का सप्तवर्षीय शासन भय और अहंकार पर आधारित था। उसने अनेक लोक विरोधी कानून और प्रशासनिक कदम उठाए, जिससे भारतवासियों की भावनाएँ आहत हुईं।
- 1899 में कलकत्ता नगर निगम में भारतीय सदस्यों की संख्या घटा दी गई।
- 1904 में 'इंडियन ऑफिसियल सिक्रेट्स एक्ट' लागू किया गया जिसने प्रेस की स्वतंत्रता को सीमित कर दिया।
- 1904 में ही 'इंडियन यूनिवर्सिटीज़ एक्ट' ने कलकत्ता विश्वविद्यालय को पूर्ण सरकारी नियंत्रण के अधीन कर दिया।

अध्याय
16

क्रांतिकारी राष्ट्रवादी आंदोलन
(Revolutionary Nationalist Movement)

16.1 क्रांतिकारी आतंकवाद के उदय के कारण
16.2 क्रांतिकारी आतंकवादियों का कार्यक्रम
16.3 भारत के विभिन्न क्षेत्रों में क्रांतिकारी आंदोलन का प्रसार
16.4 विदेशों में क्रांतिकारी आतंकवाद का प्रसार
16.5 क्रांतिकारी आंदोलन का अवसान
16.6 होमरूल आंदोलन

बदला लेने की भावना या फिरौती पाने की लालसा के कारण प्राचीन समय से ही आतंकवादी तरीके अपनाए जाते रहे हैं, मगर जहाँ तक क्रांतिकारी आतंकवाद का प्रश्न है, इसके पीछे मुख्यत: राज्य की हिंसात्मक प्रतिक्रिया और सरकार से बदला लेने की भावना देखने को मिलती है। प्रतिक्रियावादी प्रेस और सरकार ने भारत की क्रांतिकारी गतिविधियों को षड्यंत्र एवं कत्ल के नाम से बदनाम किया, मगर इस क्रांतिकारी आतंकवाद में शामिल लोगों की पृष्ठभूमि, उनकी कार्यप्रणाली, विचार एवं उद्देश्यों को गौर से देखें तो इनके राष्ट्रवादी होने का प्रमाण मिलता है।

- भारत में क्रांतिकारी आतंकवाद का उदय एवं विकास दो चरणों में हुआ। इन चरणों में क्रांतिकारी गतिविधियों के तरीके, पद्धति एवं विचारधाराओं में स्वरूपगत अंतर रहा।

16.1 क्रांतिकारी आतंकवाद के उदय के कारण
(Causes of Emergence of Revolutionary Terrorism)

प्रथम चरण:

- तत्कालीन राजनीतिक परिदृश्य से मोहभंग की स्थिति पैदा हुई। वस्तुत: बंगाल विभाजन रद्द कराने एवं लोगों को संगठित करने में स्वदेशी आंदोलन विफल हो गया क्योंकि सरकार द्वारा स्वदेशी आंदोलन का क्रूर दमन कर दिया गया। जिससे शांतिपूर्वक आंदोलन करने की रणनीति से मोहभंग की स्थिति उत्पन्न हो गई।
- नरमपंथी राजनीति अव्यावहारिक हो चुकी थी और गरमपंथी राजनीति भी असफल सिद्ध हो रही थी। नरमपंथियों की राजनीति उन्हें 'भीखमंगी' राजनीति लगी। अत: बम और पिस्तौल की राजनीति के प्रति उनका विश्वास जागा।
- सरकारी अधिकारियों के दंभ और उनकी दमनात्मक कार्रवाइयों ने बंगाल के युवकों को विद्रोही बनाया। अब वे इस दर्शन में विश्वास करने लगे कि **बल को बल** से ही रोका जाना चाहिये।
- 1905 में रूस पर जापानी विजय ने यूरोपीय सर्वोच्चता के मिथक को तोड़ दिया। आयरिश राष्ट्रवादियों एवं रूसी निहलिस्टों (विनाशवादियों) द्वारा किये जाने वाले वीरतापूर्ण कार्यों और क्रांतिकारी आतंकवादी कार्यों ने भारतीय युवकों को प्रेरित किया।
- 'आनंदमठ' जैसे साहित्य और 'युगांतर', 'संध्या', 'काल' जैसे समाचार-पत्रों ने तीव्र राष्ट्रवादी भावनाएँ उत्पन्न कीं और व्यक्तिगत वीरता को प्रोत्साहित किया।

द्वितीय चरण:

- 1920 के दशक में उदित हुए क्रांतिकारी आतंकवाद की पृष्ठभूमि तो प्रथम चरण के क्रांतिकारियों ने ही तैयार कर रखी थी, लेकिन तत्कालीन समय में असहयोग आंदोलन को वापस लेने से नवयुवकों में नैराश्य की भावना फैली।
- वस्तुत: गांधी के असहयोग आंदोलन में नवयुवकों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था और उन्हें गांधी के एक वर्ष के अंदर स्वतंत्रता दिलाने के नारे ने उत्साह से भर दिया था, किंतु चौरी-चौरा कांड के बाद गांधी द्वारा आंदोलन की वापसी के पीछे उन्हें कोई ठोस कारण नज़र नहीं आया। फलत: गांधीवादी राजनीति से उनका मोहभंग हुआ और वैकल्पिक राजनीति के रूप में वे आतंकवाद की तरफ बढ़े।

अध्याय
17

गांधी
(Gandhi)

17.1 गांधी का दक्षिण अफ्रीका का अनुभव	17.5 खिलाफत आंदोलन: 1919
17.2 गांधी के आगमन के समय भारत की परिस्थितियाँ	17.6 असहयोग आंदोलन: 1920-22
17.3 गांधी की विचारधारा, रणनीति, कार्यपद्धतियाँ	17.7 सविनय अवज्ञा आंदोलन
17.4 गांधी एवं राष्ट्रीय आंदोलन का विकास	17.8 भारत छोड़ो आंदोलन

17.1 गांधी का दक्षिण अफ्रीका का अनुभव *(Gandhi's Experience of South Africa)*

गांधी की विचारधारा एवं कार्यप्रणाली को आधार प्रदान करने एवं बाद में भारत में उनकी उपलब्धियों में उनके दक्षिण अफ्रीका (1893-1914) के अनुभवों का अनेक रूपों में योगदान रहा।

- दक्षिण अफ्रीका में भारतीय प्रवासियों पर वहाँ की सरकार विभिन्न कानूनों जैसे-भारतीयों के लिये अनिवार्य पंजीयन, गैर-ईसाई भारतीयों के विवाह को अमान्य करार देना आदि के माध्यम से अत्याचार करती थी। फलतः गांधी ने इस शोषण के विरुद्ध सत्याग्रह किया और वे जेल भी गए। अफ्रीकी सरकार ने गांधी पर अनेक प्रतिबंध लगाए व यातनाएँ दीं किंतु गांधी झुके नहीं और अपना आंदोलन जारी रखा। अंततः दक्षिण अफ्रीकी सरकार ने भारतीयों की मुख्य मांगें मान लीं। पंजीकरण प्रमाण-पत्र से संबद्ध कानून समाप्त हो गया तथा भारतीय रीति-रिवाज़ से विवाह करने की छूट दी गई। इस तरह शांतिपूर्ण अवज्ञा से शत्रु को आंदोलन की मांगें मनवाने पर मजबूर किया जा सकता है, इस प्रयोग में गांधी सफल हुए थे।
- दक्षिण अफ्रीका में गरीब भारतीयों के जुझारूपन को देखकर गांधी को यह विश्वास हो गया था कि भारतीय जनता किसी उदात्त (महान) उद्देश्य के लिये जुझारू संघर्ष एवं बलिदान को तैयार हो जाएगी।
- दक्षिण अफ्रीका की विशिष्ट परिस्थितियों के कारण विभिन्न धर्मों, समुदायों एवं वर्गों के लोग इन आंदोलनों में एकजुट होकर खड़े हुए और गांधी ने इनका नेतृत्व किया। इनमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, गुजराती, ईसाई, दक्षिण भारतीय, अमीर व गरीब, पुरुष व महिलाएँ सभी शामिल थे।
- इस तरह गांधी आजीवन जिस हिन्दू-मुस्लिम एकता की आवश्यकता व संभावना को मानते रहे उसका आधार दक्षिण अफ्रीका के इन आंदोलनों में देखा जा सकता है।
- दक्षिण अफ्रीका में आंदोलन के दौरान गांधी को यह भी अनुभव हो गया कि आंदोलन का नेतृत्व करने वाले को समर्थक व विरोधी, दोस्त व दुश्मन दोनों के आक्रोश का सामना करना पड़ता है।
- गांधी ने अनुशासित कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षण देने के लिये **फीनिक्स फार्म** की स्थापना की जिसके अंतर्गत शांतिपूर्ण धरना, सामूहिक गिरफ्तारियाँ देना इत्यादि गतिविधियों से परिचय कराया जा रहा था।
- कभी-कभी आंदोलन को अचानक ही एकतरफा ढंग से गांधी द्वारा वापस भी ले लिया जाता था, जैसा कि 1908 में जॉन **स्मट्स (ब्रिटिश मूल का अफ्रीकी राजनीतिज्ञ)** के मौखिक वादे पर पहला सत्याग्रह वापस ले लिया गया। इन कदमों को लोग पसंद नहीं करते थे और गांधी के सहयोगी भी उनकी आलोचना कर देते थे, पर गांधी विचलित नहीं होते थे।
- इस तरह जनसामान्य को प्रेरित करना किंतु साथ ही जन गतिविधियों को नेता द्वारा पूर्व निर्धारित सीमाओं और सर्वोपरि अहिंसक पद्धतियों तक ही कड़ाई से सीमित रखना गांधी की पद्धति का अहम अंग था।
- दक्षिण अफ्रीका में गांधी को विरोधी राजनीतिक धाराओं से उन्मुक्त वातावरण में एक विशिष्ट राजनीतिक शैली, नेतृत्व के नए अंदाज़ और संघर्ष के नए तरीकों को विकसित करने का मौका मिला। फलस्वरूप, वह गांधीवादी रणनीति और

अध्याय
18

भारत छोड़ो आंदोलन
(Quit India Movement)

18.1 द्वितीय विश्वयुद्ध और राष्ट्रीय आंदोलन	18.3 क्रिप्स मिशन
18.2 अगस्त प्रस्ताव	18.4 भारत छोड़ो आंदोलन

18.1 द्वितीय विश्वयुद्ध और राष्ट्रीय आंदोलन *(Second World War & National Movement)*

भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस द्वारा प्रांतों में सत्ता सँभालने से पहले ही अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर युद्ध के बादल मंडराने शुरू हो गए थे। सेव्रे/सेव्रेस (Sevres) की संधि (प्रथम महायुद्ध के बाद 1920 में मित्र राष्ट्रों एवं तुर्की के बीच हुई संधि) ने यूरोप को एक अनिश्चित शांति प्रदान की थी। सितंबर 1939 में जर्मनी द्वारा पोलैंड पर आक्रमण के बाद द्वितीय महायुद्ध आरंभ हुआ, जो पूरे 6 साल चलता रहा। पहले चरण में यह युद्ध यूरोप के क्षेत्रों में केंद्रित रहा, परंतु अप्रैल 1940 से 1942 के बीच इसने विकराल रूप धारण कर लिया, जब स्केन्डिनेविया, नीदरलैंड, फ्राँस तथा ब्रिटेन के साथ भी युद्ध शुरू हो गया। जर्मनी ने रूस पर भी आक्रमण कर दिया। तीसरा चरण तब शुरू हुआ जब 1942 के अंत में अमेरिका की उभरती सैनिक सर्वोच्चता को देखते हुए और अटलांटिक में ब्रिटेन द्वारा अपनाई गई नीति के चलते जर्मनी को अपनी सेनाएँ पीछे हटानी पड़ीं। पहले रूस के साथ युद्ध समाप्त किया गया। उत्तरी अफ्रीका के विरुद्ध इटली तथा जर्मनी के संयुक्त अभियान को पराजय का मुँह देखना पड़ा। हिरोशिमा तथा नागासाकी पर एटम बम गिराए जाने तथा जापान द्वारा बिना शर्त हथियार डाल देने के बाद युद्ध समाप्त हो गया।

युद्ध के प्रति भारत का दृष्टिकोण *(India's Attitude towards the War)*

- भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस तथा अन्य राष्ट्रवादी समूहों का युद्ध के प्रति दृष्टिकोण निर्मित करने में युद्ध की घोषणा तथा इसके प्रसार का काफी हाथ था। इसमें कोई शक नहीं कि **कॉन्ग्रेस की सहानुभूति ब्रिटेन तथा इसके मित्र देशों के साथ थी।** कॉन्ग्रेस ब्रिटेन की प्रजातांत्रिक तथा संसदीय संस्थाओं को इज़्ज़त की नज़र से देखती थी तथा नाज़ी एवं फासीवाद को स्वतंत्रता, प्रजातंत्र, शांति और प्रगति का दुश्मन समझती थी। परंतु वह ब्रिटिश राजनीतिक नेताओं के व्यवहार से चिंतित थी क्योंकि इसका मानना था कि ब्रिटेन का युद्ध में भाग लेने का उद्देश्य प्रजातंत्र की रक्षा न होकर साम्राज्यवादी हितों की सुरक्षा करना है। अप्रैल 1936 में नेहरू ने घोषणा की थी कि **'भारत साम्राज्यवादी आक्रमण को मूक दर्शक बनकर नहीं देखेगा'।**
- 1936 में **ब्रुसेल्स शांति सम्मेलन** में कॉन्ग्रेस ने शांति बनाए रखने का वचन दिया। इसने इटली द्वारा अबीसीनिया (इथियोपिया) पर हमले की निंदा की। इसी तरह 1937 में इसने भारत सरकार द्वारा भारत की सहमति के बिना चीन में सेनाएँ भेजने की भी निंदा की। मार्च 1939 में भारत ने स्वयं को ब्रिटिश नीति से अलग कर लिया तथा भारत पर युद्ध थोपने का विरोध करने का निश्चय किया। **23 अगस्त** का दिन **'युद्ध विरोधी दिवस'** के रूप में मनाया गया।
- 3 सितंबर, 1939 में वायसराय ने भारत को ब्रिटेन द्वारा जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा के साथ जोड़ दिया। भारत के प्रांतीय मंत्रिमंडलों अथवा किसी भारतीय नेता से कोई सलाह-मशविरा नहीं किया गया और न ही उनकी सहमति ली गई। भारत सरकार अधिनियम, 1935 के प्रावधानों के बावजूद ब्रिटिश सरकार द्वारा एकतरफा युद्ध की घोषणा ने भारतीय नेताओं को असमंजस में डाल दिया। उनके सामने सवाल था कि वे किसे अधिक महत्त्व दें? भारतीय जनता के हितों को अर्थात् विदेशी शासकों से मुक्ति को या फिर फासीवाद एवं राजनीतिक दमन के विरुद्ध, उदारवादी प्रजातांत्रिक मूल्यों की रक्षा करने वाले अंतर्राष्ट्रीय युद्ध को! यह चर्चा का पहला मुद्दा था।

अध्याय
19

युद्धोपरांत संधि वार्ताएँ एवं कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम (Post-war Treaty Talks and Some Other Important Events)

19.1 शिमला कॉन्फ्रेंस	19.4 रॉयल इंडियन नेवी का विद्रोह
19.2 वेवेल योजना	19.5 कैबिनेट मिशन योजना
19.3 आज़ाद हिन्द फौज मुकदमा	19.6 विभाजन की ओर

भारत छोड़ो आंदोलन तथा आज़ाद हिन्द फौज के साहसपूर्ण कारनामों से राष्ट्रीय आंदोलन कई कदम आगे बढ़ा तथा इससे ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रभुत्व को काफी धक्का लगा। अब ऐसा प्रतीत होने लगा कि युद्ध के बाद यदि कॉन्ग्रेस एक बार फिर 1942 जैसा आंदोलन आरंभ कर दे तो ब्रिटिश शासन के समक्ष मुश्किल स्थिति उत्पन्न हो जाएगी जैसा कि वायसराय ने टिप्पणी की कि- "हो सकता है कि हम विद्रोह को कुचल डालें, परंतु इसका विकल्प कोई नहीं होगा, हमें केवल अफसरों के शासन पर निर्भर रहना होगा और हमारे पास कार्यकुशल अफसरों की संख्या इतनी नहीं है।" इस रूप में युद्धोपरांत भारत में ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतीय नेताओं के साथ की गई संधिवार्ता इसी समस्या के निराकरण की दिशा में उठाए गए कदम थे। राजनीतिक हल के लिये परिस्थितियाँ भी अनुकूल थीं क्योंकि भारतीय नेता भी अब समझौता करने के मूड में थे।

19.1 शिमला कॉन्फ्रेंस *(Shimla Conference)*

1945 के मध्य तक यूरोप में युद्ध प्राय: समाप्त होने को था हालाँकि, पूर्वी एशिया के क्षेत्रों में यह अभी चल रहा था। भारत में वायसराय लिनलिथगो का स्थान **वेवेल** ने ले लिया। नए वायसराय का विचार था कि एशिया में युद्ध अभी कुछ समय के लिये चल सकता है जिसके लिये भारत के संसाधन तथा सैनिक अड्डों का बेहतर एवं संपूर्ण उपयोग अति आवश्यक है। अत: जापान के साथ युद्ध लड़ने के लिये भारतीय राष्ट्रीय नेताओं तथा भारतीय जनता का सहयोग वांछनीय है। इंग्लैंड में आम चुनावों में एक महीना रह गया था। जून 1945 में चर्चिल ने वेवेल को भारतीय नेताओं के साथ बातचीत करने की आज्ञा दे दी। वेवेल विचार-विमर्श के लिये लंदन गए तथा भारत वापस आने के बाद कॉन्ग्रेस कार्यसमिति के सभी सदस्यों को जेल से रिहा कर दिया तथा यह घोषणा की कि निम्नलिखित संवैधानिक तथा राजनीतिक प्रस्तावों पर विचार जानने के लिये वे भारत के विभिन्न राजनीतिक दलों एवं समूहों का शिमला में एक सम्मेलन बुलाना चाहते हैं। प्रस्ताव इस प्रकार थे:

1. राजनीतिक तनावों को कम करके भारत को स्वशासन की दिशा की ओर अग्रसर किया जाए।
2. वायसराय की नई कार्यकारिणी समिति का गठन किया जाए, जिसमें वायसराय तथा कमांडर-इन-चीफ को छोड़कर सभी सदस्य भारतीय हों।
3. नई कार्यकारिणी समिति के निम्नलिखित कार्य होंगे:
   - युद्ध का संचालन करना।
   - भारत सरकार का शासन चलाना।
   - उन उपायों पर विचार करना जिनसे भारत में एक स्थायी संविधान बनाने पर सहमति हो सके।
4. **विदेश विभाग** जो अभी वायसराय के पास है, वह **भारतीय सदस्य को हस्तांतरित** कर दिया जाए।
5. इस कार्यकारिणी समिति में जातीय हिन्दुओं तथा मुसलमानों का समान प्रतिनिधित्व होगा।
6. यह कार्यकारिणी समिति अंतरिम राष्ट्रीय सरकार की तरह कार्य करे।
7. भारत के लोगों द्वारा भविष्य में अपना नया संविधान बनाने में इस अंतरिम सरकार को कोई एतराज़ नहीं होगा।
8. सांप्रदायिकता की समस्या का हल ढूंढना, जो स्वशासन की प्रगति में मुख्य बाधा है।
9. नई सरकार भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अंतर्गत कार्य करेगी।

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी, फ्लोचार्ट तथा मानचित्र का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456